1857 की क्रांति और झाँसी

डॉ0 किशन यादव,

अध्यक्ष,
राजनीति विज्ञान विभाग व शोध केन्द्र,
बुन्देलखण्ड कॉलेज,झाँसी (उ.प्र.)

झाँसी नगर और इस राज्य की महत्वपूर्ण भौगोलिक और सामरिक स्थिति को सबसे पहले महाराजा वीरसिंह देव ओरछा नरेश ने पहचाना था और यहाँ एक विशाल और ऊँची दीवारों से युक्त आकर्षक किला भी निर्मित करा दिया था, तब इस छोटे से ग्राम का नाम बलवन्त नगर था। किले के अलावा अन्य कोई महत्वपूर्ण इमारात शायद उन्होंने यहाँ नहीं बनवाई थी। क्योंकि आरेछा से बहुत नजदीक होने के कारण राजधानी की सुरक्षा हेतु एक बड़ा किला ही काफी था जहाँ आरेछा राज्य की सेनाऐं ठहर कर आसपास के क्षेत्र की सुरक्षा करती थी साथ ही साथ राजधानी के लिए भी सेकेण्ड लाइन ऑफ डिफेन्स की आवश्यकता की पूर्ति इस दुर्ग से हो जाती थी। लेकिन इस भव्य किले को देखकर मराठा शक्ति ने ही पहली बार यहाँ के वास्तविक महत्व को स्वीकार करके, इस दुर्ग पर अधिकार किया, यहाँ पेशवा की ओर से सूबेदारी कायम हो गई तब एक प्रशासनिक इकाई का दर्जा झाँसी को मिल गया और बंगरा की पहाड़ी के इर्द बसी चंद झोपड़ियों की नामालूम बस्ती को अनायास बड़ी तेजी से विकसित होने का अवसर प्राप्त हो गया । अंग्रेज लेखकों ने भी इसी तथ्य को अपने अभिलेख में स्वीकार किया है वरना इससे पूर्व झाँसी या बलवत नगर की महत्ता सिर्फ किले के कारण ही तो जानी जाती थी। किसी ग्राम या कस्बे का विकास और विस्तार वहाँ स्थापित होने वाली प्रशासनिक इकाई से ही संभव होता है और देखते ही देखते यहाँ आबादी बढ़ी, मकानात बने कुछ हवेलियाँ बनी और सूबेदार का आवासीय भवन (जिसे अब रानी महल कहते है) निर्मित हुआ।

यह सब तो धीरे–धीरे होता ही रहा, लेकिन मराठा सैनिकों का शक्तिशाली गैरीजन (सैनिक छावनी) यहाँ की खास चीज थी जिसके बल पर आस पास की बुन्देला रियासतों से चौथ वसूल की जाने लगी। अंग्रेजी अभिलेखों के अनुसार मूल झाँसी शहर विद्रोह के बाद सन् 1885 तक अंग्रेजों के पास नहीं था।[1] उसके दस–बारह वर्ष पूर्व यहाँ की आबादी 30,000 अनुमानित की गई थी । लेकिन सन् 1935 में जब कर्नल स्लीमन झाँसी आया था उस समय उसने डायरी में (जो बाद में प्रकाशित हुई) लिखा कि यहाँ की आबादी करीब 60,000 है और शहर समृद्धि के शानदार मंच पर खड़ा हुआ है।

मराठा सूबेदारी के समय से जब झाँसी शहर बाकायदा पेशवाई झण्डे की आनबान और शान की एक मिसाल के रूपा में अपनी शोहरत फैलाने लगा, तब इसी काल में झाँसी शहर के चारों ओर बेहद कलात्मक और खूबसूरत चहारदीवारी का निर्माण कराया गया। इस चाहरदीवारी में झाँसी से बाहर जो राजमार्ग निकलते थे उनमें राजसी ठाठबाट के बड़े–बड़े द्वारा निर्मित कराए गए, [2] जैसे बड़ागाँव दरवाजा, ओरछा दरवाजा, लक्ष्मी दरवाजा, सैयर दरवाजा, दतिया दरवाजा उन्नाव दरवाजा आदि और इसके अलावा अन्य छोटे दरवाजे जैसे सागर खिड़की,

अलीगोल खिड़की, गनपत खिड़की इत्यादि भी वजूद में आई । यह तमाम दरवाजे आज भी बरककार है। इनमें मोटे शहतीरों के (लकड़ी के) शानदार फाटक लगाए गए थे जो ज्यादातर अभी तक मौजूद है फर्क सिर्फ इतना है कि अब यह फाटक कभी बंद नहीं होत है और सड़की की ऊँचाई बढ़ते रहने के कारण इन्हें बन्द भी नहीं किया जा सकता है। कुछ दरवाजों के फाटक ट्रकों की टक्कर से क्षतिग्रस्त हो गए है। बड़ा गाँव दरवाजें का विशाल फाटक का एक पल्ला अभी यथावत् है लेकिन एक पूरा बड़ा पल्ल्ला यानी दरवाजे का आधा किवाड़ कई वर्ष हुए एक ट्रक से धक्के से टूटकर बरसों, दरवाजे के बाहर गिरकर पड़ा रहा। ऐतिहासिक सामग्री होने के बावजूद इस गिरे हुए कुवाड़ को कौन लगवाता। खण्डेराव दरवाजा, अब गिरवाया जा चुका और खिड़कियों अर्थात् छोटे द्वारों की भी वह महत्ता नहीं रह गई जहाँ कभी चौकी पहरे बैठे रहते थे और इन दरवाजों से सटी हुई आवासीय दालानों से सेना तैनात रहती थी।[3]

शहरों के चारों तरफ के पास खाईयाँ (जहाँ जल भरे जाने की ढ़लाने मौजूद हों) एक मजबूत और अच्छी खासी ऊँची चहारदीवारी बनवाने में मराठा सूबेदारी ने हजारों मजदूर, मिस्त्री, पत्थर ढोने वाली पहिएदार गाड़ियाँ और चूना पेरने के घेरे जगह बनवाए थे और जब यह निर्माण कार्य हो रहा था तब शहर की आबादी में न सिर्फ वृद्धि वरन दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के क्रय–विक्रय का व्यापार भी बढ़ गया था।

झाँसी शहर में चहारदीवारी का निर्माण इस बात का शानदार प्रमाण है कि झाँसी की सूबेदारी सैनिक और वित्तीय संसाधनों से अच्छी तरह लैस थी। उत्तर–प्रदेश में कम से कम झाँसी उन इने गिने शहरों में से एक है जिसके चारो तरफ एक भरपूर ऊँचाई की चहारदीवारों मौजूद है। फैजाबाद नगर पहले अवध के नवाबों की राजधानी था वहाँ दरवाजों के नाम तो है जैसे दिल्ली दरवाजा लेकिन इतनी समृद्ध रियासत ने भी न तो फैजाबाद और न लखनऊ को चहार दीवारी से घेर देने की बात सोची।[4] यद्यपि उन्होंने भवनों के निर्माण में अच्छी मिसालें बतौर यादगार छोड़ी है । किलों के निर्माण के बाद राजधानी को शहरपनाह से घेरने की परिपाटी रही है, मुख्यता सुरक्षा की दृष्टि से और इसे भी इने गिने शासकों ने ही बनवाया है। मध्यप्रदेश की दतिया रियासत में शहरपनाह बनी है।

वैसे अंग्रेजों द्वारा तैयार किए गए वृतांतों में झाँसी शहर का वजूद लगभग सन् 1553 में मिलता है। यहाँ सह अहीर बिरसा और असोले पश्चिम के किसी भाग से आए थे बंगरा की पहाड़ी पर (जहाँ आज झाँसी दुर्ग मौजूद है) अपनी झोपड़ियाँ डालकर ऊँचाई पर रहने लगे ताकि वे मैदान में चरने वाले पशुओं पर नजर रख सकें। तब यहाँ घना जंगल था। सन् 1613 ईसवीं में महान बुन्देल राजा वीर सिंह जूदेव ने इस स्थल को देखा और दुर्ग निर्माण कराया, इसमें जो रिहायशी भाग थे उसका नाम मंजु महल रखा गया। इस भाग में जो कक्ष है उनमें भी कक्षों की छतपर ''डाईमन्ड कट'' के त्रिकोणों का निर्माण का निर्माण (जैसा कि आगरे के किले के कक्षों में तथा कालपी के किले के कक्ष में मौजूद है) कराया। छत सीधी सपाट न होकर रत्न की तराश की डिजाइन पर निर्मित होने की परिपाटी कई इमारतों में आज भी मौजूद है। और किला बनने के बाद एक छोटा मोटा गाँव भी उसके गिर्द बस गया। तब यह गाँव बलवंतनगर के नाम से जाना जाता था।[5] बलवंतनगर कब झांसी कहलाने लगा, इसका सही प्रमाण नहीं मिल सका है। अंग्रेजी अभिलेखों में यह टिप्पणी जरूर मिलती है कि वीरसिंह देव के राज्य काल में जैतपुर में कोई स्वतंत्र भू–भाग का अधिकारी राजा होना नहीं पाया जाता, जिसने ओरछा के किले पर बैठकर झाँसी दुर्ग के लिए यह कहा हो कि – 'कुछ झांई सी दिखाई देती है।' बहरहाल 'झांईसी' का ही 'झाँसी' में परिवर्तित हो जाना

कोई अचरज की बात नहीं है। नामों के बनने बिगड़ने का इतिहास कभी–कभी जल्दी नहीं मिलता है। महाराजा वीरसिंह देव के साथ उस दिन ओरछा की छत पर बैठने वाला अन्य राजपुरूष कहीं किसी अन्य पड़ोसी राज्य का भी हो सकता है। जिसने उपरोक्त बात कहीं हो जो झाँसी के नाम कारण से संबद्ध हो गई। वैसे ओरछा के इतिहास से अंग्रेजों की टिप्पणी गलत सिद्ध होती है। अतः इस किंवदन्ती में बहुत ज्यादा सच्चाई है कि जैतपुर के जागीरदार राजकुमार अब ओरछा आए हों तब महाराज वीर सिंह देव ने ओरछा राजमहल की छत पर बैठ कर नवनिर्मित दुर्ग को बातचीत के दौरान दिखाया हो जहाँ से झाँसी के किले की एक धुंधली सी छाया मात्र नजर आई हो और जैतपुर के राजकुमार ने कहा कि 'झाँई सी' तो दिख रही है। जैतपुर में अंग्रेजों वृतांत (गजेटियर की टिप्पणी) के अनुसार किसी राजा का वजूद था ही नहीं। यह बात उन्हें पूरी तौर पर मालूम नहीं होगी तभी उन्होंने उपरोक्त टिप्पणी अंकित की है। महाराजा वीरसिंह देव का शासनकाल सन् 1606 से 1627 तक प्रमाणित है तथा उनका जन्म विक्रम संवत् 1599 में हुआ था। ओरछा रिकार्ड अनुसार वीरसिंह देव के तीन विवाह हुये थे ।

1. शाहाबाद के दीवान श्यामसिंह घंघेरे की बेटी अमृत कुंअर से इनके पाँच पुत्र थे। जुझारसिंह, नरहरि दास, पहाड़सिंह, तुलसीदास और बेनीदास । जुझार सिंह और पहाड़सिंह, ओरछा के राजा हुए थे। नरहरिदास को घामौनी, तुलसीदास को महू और बेनीदास को पहारी की जागीर दी गई थी।
2. दूसरा विवाह केरूआ के प्रमार सिंह की कन्या गुमान कुंअर के साथ हुआ था। इस विवाह से चार पुत्र और एक कन्या जन्मी। पुत्र दिमान हरदौल को बड़ा गाँ, भगवन्तराय को दतिया, चन्द्रभान को जैतपुर–कोंच परगना और किशन सिंह को देवराहा जागीरें दी गई थीं। पुत्री कुंजावती का विवाह बरेछा के देवीसिंह के साथ हुआ था।
3. तीसरा विवाह शहर शाहाबाद के पूरनसिंह घंघरे की कन्या पंचम कुंअर के साथ हुआ था इस रानी से तीन पुत्र हुए थे। बाघराज को टहरौली की जागीर, माधवसिंह को खरगापुर और परमानन्द ओरछा में ही रहें।

इस प्रकार जैतपुर एक जागीर थी ओरछा राज्य की। और यह भी सिद्ध है कि इसे वीरसिंह देव ने अपनी दूसरी रानी से उत्पन्न पुत्र चन्द्रमान को जैतपुर–कोंच इलाके को बतौर जागीर दिया था । अतः इस किंवदन्ती में बहुत ज्यादा सच्चाई है कि जैतपुर के जागीरदार राजकुमार जब ओरछा आए हों तब महाराज वीरसिंह देव ने ओरछा राजमहल की छत पर बैठ कर नवनिर्मित दुर्ग को बातचीत के दौरान दिखाया हो जहाँ से झाँसी के किले की एक धुंधली सी छाया मात्र नजर आई हो और जैतपुर के राजकुमार ने कहा हो कि 'झांई सी' तो दिख रही है।

शाहजहाँ के राज्यकाल में वीरसिंह देव के पुत्र महाराज जुझार सिंह के मुगल विरोधी रूख के कारण यह दुर्ग मुगलों के अधिकार में चला गया और अंग्रेजों के अनुसार तब से मराठा आगमनकाल तक यहाँ दिल्ली के तहत नियुक्त मुगल सूबेदार या किलेदारों का प्रभुत्व बना रहा। सन् 1729 से सन् 1742 तक मुकीम खान यहाँ का राज्यपाल (सूबेदार) रहा तथा बाद में एक बुलाकी खान की गद्दारी के कारण मराठों ने इस किले पर कब्जा कर लिया ।[6] झाँसी की कामदारी से पदच्युत होकर बुलाकी खान मालवा चला गया और तब प्रसिद्ध मराठा सरदार नारूशंकर का एक जनरल मल्हार कृष्णराव उत्तर

भारत के अभियान पर सरगर्म हो चुका था। इसी के साथ बुलाकी खान आक्रमण करती, इलाकों पर इलाके जीतती मराठा सेना के साथ बिजौली तक आया और वहाँ वह मराठा सेना से विलग हुआ। अंग्रेजी वृतान्त के अनुसार वह अपने पदच्युत होने पश्चाताप से भरा हुआ झाँसी शहर में दाखिल हुआ और उसने यहाँ के हाकिम से क्षमादान प्राप्त कर लिया तथा अपने मद पर भी बहाल हो गया।

अब उसने मराठा सेनापति को एक गुप्त संदेश भेजा तथा रात के अंधेरे में ही मराठा आक्रमण किले पर हो गया और बिना किसी रक्तपात के किला शाही नियंत्रण से छूटकर मराठों को मिल गया। मराठों के लिए बुलाकी खान ने किले का एक फाटक यह कहकर खुला छोड़ दिया था कि मेहमान आने वाले है।[7] मराठों ने मुकीम खान को अपनी हिरासत में ले लिया और उससे एक दस्तावेज इस बात का लिखा लिया कि उसने झाँसी दुर्ग मराठों के हाथ बेच दिया है। यह कथा झाँसी गजेटियर 1909 में दर्ज है।

वर्तमान समृद्ध एवं बुन्देलखण्ड का सबसे बड़ा शहर झाँसी, नारूशंकर की ही देन है। पुराने किले में उसने नया निर्माण कराया और उसे शंकरगढ़ कहा जाता है। जो पुराने किले में जोड़ा गया एक नया निर्माण ही है। शहर में विकास किया और आस पड़ोस के इलाकों के लोगों को हुक्म दे कर झाँसी बुलाकर बसाया गया। 1757 में पूना दरबार ने उसे वापस बुला लिया और माधवजी गोविन्द आंतिया नया सूबेदार आया जिसने खण्डेराव गेट से बाहर ग्वालियर राजमार्ग पर एक छोटा सा आकर्षक तालाब बांध बनाकर तैयार कराया और इसे आंतिया ताल का नाम दिया। अफसोस की बात है कि आंतिया ताल में प्रवाहित होकर आने वाले बरसाती जल मार्ग पर नए मकान अंधाधुंध बन गए है और जल आने का मार्ग अवरूद्ध हो गया है, साथ ही साथ तालाब के लगभग एक तिहाई भाग पर मिट्टी भर दी गई है और नए मकान बना दिए गए है तथा एक नई सड़क भी आंतिया ताल सड़क से तालाब को पाटती हुई मिला दी गई है। इस तरह शहर का एक और तालाब अब अपनी अंतिम घड़ियां गिन रहा है।[8] वह जगह जलकुंभी के जबरदस्त पटाव से बरबाद हो गई है जहाँ एक जमाने में लोग मजे से तैरते और नहाते थे तथा सड़क के उस पास जो बागात और खेत है उन्हें इसी जलस्त्रोत से सिंचाई के लिए भरपूर पानी मिलता था । शासन बड़ी खामोशी से पुरानी इमारतों और तालाबों को घुट–घुटकर मरते देख रहा है।

सन् 1761 से 1765 का समय धूमिल है। कहा जाता है कि अवध के नवाब शुजाउद्दौला का इस किले पर अधिकार रहा है लेकिन पाँच सात माह के बाद ही गोसांई अनूपगिरि ने, जिसने मोठ राज्य की नींव डाली थी, यहाँ अपना कब्जा कर लिया। इस दौरान गोसांईयों ने नगर के पूर्व में एक विशाल शानदार तालाब का निर्माण कराया जिसे लक्ष्मीताल कहते है।[9] बेहद खर्च करने के कारण गोसाई शासन ऋणग्रस्त हुआ और किला और शहर महाराजा ओरछा के पास गिरवी रख दिया गया।

जब सन् 1776 में मराठा सेनापति विश्वासराव लक्ष्मन ने यहाँ आक्रमण किया तब यह ओरछा का इलाका बन चुका था। इसके बाद आने वाले सूबेदार रघुनाथ राव रही ने पूना दरबार से अपने स्वतंत्र करते हुए 24 वर्षों यहाँ राज किया तथा 1974 में उसके निधन पर उसका भाई शिवराव हरी या शिवराज भाऊ यहाँ का शासक हुआ। इसी शासक ने सन् 1796 से 1814 के मध्य झाँसी की शहरपनाह या चहारदीवारी का निर्माण कराया जैसा कि अंग्रेज हुकूमत द्वारा तैयार किए गए गजेटियर के अंकित है। बहरहाल शिवराज के भाऊ के परिवार का राज्य यहाँ 1853 तक अवैध रूप से कायम रहा जब अंतिम महाराजा गंगाधर राव का निधन हुआ

था और झाँसी राज्य अंग्रेजी सल्तनत में मिला लिया गया।

सन् 1858 से 1861 तक झाँसी शहर अंग्रेजों के पास रहा। इसके बाद शहर और झाँसी का किला मय परगना पिछोर, करैरा तथा भाण्डेर और झाँसी राज्य का कुछ भाग, ग्वालियर के सिंधिया महाराजा को विद्रोह के समय अंग्रेजों को दी गई मदद के इनाम में हस्तांतरित कर दिया गया और 25 वर्ष तक सिंधियाँ की हुकूमत झाँसी शहर पर रही तथा सिंधिया राज का हाकिम झाँसी में रहने लगा।[10] इसी दौरान ग्वालियर का ऐतिहासिक दुर्ग तथा मुरार की छावनी पर अंग्रेजी सेना का कब्जा बना रहा। यह व्यवस्था लार्ड केनिंग और ग्वालियर दरबार के बीच हुई 1860 की संधि के तहत की गई थी। इसमें तय था कि किला जब उपयुक्त मौका होगा तब खाली कर दिया जाएगा।

सन् 1865 में भारत सरकार और इंग्लैण्ड की सरकार ने मिलकर तय किया कि अब उचित अवसर आ गया है और ग्वालियर किला तथा मुरार कैन्ट खाली किया जा सकता है। गर्वनर जनरल लार्ड डफरिन ने ग्वायिर में दरबार करके यह क्षेत्र ग्वालियर नरेश को वापस कर दिया, इसके एवज में ग्वालियर दरबार ने अंग्रेज सरकार को 15 लाख रुपए 37 भवनों और निर्माणों का मूल्य अदा कर दिया जो अंग्रेजों ने छावनी निर्माण में व्यय किए थे। इसी के साथ ग्वालियर दरबार ने झाँसी शहर और किले पर से अपने सारे अधिकार वापस लेकर इसे अंग्रेजों को सौंप दिया। इसीलिए अंदाजन लंबे समय तक झाँसी में ग्वालियर का तांबे का पैसा बतौर मान्य मुद्रा लेन देन में प्रचलित रहा है।

संदर्भ सूची

- **योगेन्द्रनाथ गुप्ता,** झांसी की रानी, पृ. 117.
- **भगवानदास श्रीवास्तव,** झांसी की रानी असमंजस में, पृ. 54
- **वही, पृ. 119**
- **वही, पृ. 178**
- **वही, पृ. 205**
- **योगेन्द्रनाथ गुप्ता,** झांसी की रानी, पृ. 211.
- **डॉ. गणेश प्रसाद,** स्वाधीनता संग्राम से सत्ता हस्तांनातरण, पृ. 147.
- **वही,** पृ. 196
- **वही,** पृ. 251
- **वही,** पृ. 269

Copyright © 2017, Dr. Kishan Yadav. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.